सुरक्षा?

भारतीय
प्रौढ़ शिक्षा
संघ
प्रकाशन

105

सुख कहां ?

बिमला दत्ता

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
नई दिल्ली

प्रकाशक :
भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
शफीक मेमोरियल
17-बी, इन्द्रप्रस्थ एस्टेट
नई दिल्ली-110002

ग्रन्थांक : 132
© भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ : मूल्य : 3.00
संस्करण 1985

मुद्रक :
शान प्रिंटर्स,
शाहदरा, दिल्ली-110032

यह नया संस्करण—

इस पुस्तक का यह नया संशोधित-परिवर्द्धित संस्करण आपके हाथों में है। किसी भी पुस्तक का पुनर्मुद्रण उस पुस्तक की लोकप्रियता का एक अकाट प्रमाण तो माना ही जाता है, साथ ही संतोष और प्रसन्नता की भी बात होती है। जाहिर है, ये बातें इस पुस्तक के साथ भी लागू होती हैं। कहा जा सकता है कि 'प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम' की भी यह एक बड़ी उपलब्धि है।

हम अपने उन नवसाक्षर पाठकों के प्रति आभारी हैं, जिन्होंने इस उपयोगी पुस्तक को पूरी रुचि के साथ पढ़ा और इससे उन्हें बहुत-कुछ सीखने-समझने में मदद भी मिली। विश्वास है, पुस्तक के इस नये संस्करण के साथ यह सिलसिला और ज्यादा तेजी से आगे बढ़ेगा।

शुभकामनाओं के साथ—

—जे० सी० सक्सेना
महासचिव (अवैतनिक)

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
'शफीक मेमोरियल'
17-बी, इन्द्रप्रस्थ एस्टेट
नई दिल्ली-110002

1 अगस्त, 1985

प्रस्तावना

प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्र में साक्षर बन जाना कोई इतना कठिन कार्य नहीं, जितना कठिन कार्य उस साक्षरता के ज्ञान को बनाये रखना है। साक्षरता के साथ अपने आपको जोड़े रखने के लिए नवसाक्षरों को अपनी रुचि के अनुसार साहित्य नहीं मिलता। नतीजा यह निकलता है कि वे लोग प्रौढ़-शिक्षा केन्द्रों में जो कुछ सीख-कर आते हैं, अनुवर्ती साहित्य के अभाव के कारण, सब कुछ भूल जाते हैं। भार-तीय प्रौढ़ शिक्षा संघ इस दिशा में पहले से ही प्रयास करता आ रहा है। पिछले वर्ष इसने नव-साक्षरों के लिए दस पुस्तकें प्रकाशित की थीं। इस वर्ष भी भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ इसी साहित्य माला के अन्तर्गत पाँच पुस्तकें प्रकाशित कर रहा है, जो उसके पहले प्रयास की दूसरी कड़ी है। यह प्रयास इस प्रकार के साहित्य के अभाव की पूर्ति के लिए एक ठोस कदम है। इन पाँच पुस्तकों में लेखकों ने जीवन की समस्याओं को अपनी सरल भाषा में प्रकट किया है। इन्हें पढ़कर नव-साक्षरों में न केवल अक्षर-ज्ञान को बराबर बनाये रखने की भावना बनी रहेगी, बल्कि अपनी कार्य-क्षमता को बढ़ाने और सामाजिक तथा राजनैतिक चेतना को ग्रहण करने का भी उनमें उत्साह पैदा होगा। अतः ये पाँचों रोचक रचनाएँ नव-साक्षर भाई-बहनों का मन तो बहलायेंगी ही, साथ ही उनके जीवन के व्यावहा-रिक पक्ष में अपनी उपयोगिता भी साबित करने में सफल होंगी। क्योंकि इनमें उन्हीं बातों का वर्णन किया गया है, जो उनके दैनिक जीवन के कई पक्षों से जुड़ी हुई हैं। ये सभी रचनाएँ 'राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम' के अन्तर्गत प्रकाशित की

गयी हैं ।

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ प्रौढ़ शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र में अपने कर्त्तव्य का पालन करता आ रहा है । अपनी इन्हीं महान् परम्पराओं के अनुसार इसने नव-साक्षर भाई-बहनों के लिए अनुवर्ती साहित्य तैयार करने के हेतु इन्दौर में 6 मई से 9 मई 1979 को एक 'लेखक कार्यशाला' का आयोजन किया । इस कार्यशाला का विधिवत् उद्घाटन विक्रम विश्वविद्यालय के भूतपूर्व उपकुलपति तथा हिन्दी के प्रख्यात कवि डॉ० शिवमंगल सिंह 'सुमन' ने किया । इसके समापन समारोह की अध्यक्षता, इन्दौर विश्वविद्यालय के उपकुलपति डॉ० देवेन्द्र शर्मा ने की ।

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय का बहुत आभारी है, जिसने इस कार्यशाला के आयोजन और पुस्तकों के प्रकाशन के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की ।

संघ उन सभी व्यक्तियों और संस्थाओं का भी आभारी है, जिन्होंने इस कार्यशाला की सफलता में अपना पूरा-पूरा सहयोग दिया ।

आशा है पाठकों को ये रचनाएँ अवश्य ही पसन्द आयेंगी ।

—**वी० एस० माथुर**
अवैतनिक महासचिव

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
'शफीक मेमोरियल'
17-बी, इन्द्रप्रस्थ एस्टेट
नई दिल्ली-110002

29 फरवरी, 1980

कहानियां

7 : भागें कैसे ?

21 : छोटे-छोटे फूलों भरा झाड़

32 : सगर के साठ हजार पुत्र

40 : हलुवा कौन खाए ?

भागें कैसे ?

1946 की बात है। बरतानवी सरकार से आजादी हासिल करने की बात चल रही थी। लेकिन आजादी मिलने में अड़चन आ रही थी। गांधीजी पूरे देश को एक साथ आजाद देखना चाहते थे, लेकिन मुस्लिम लीग हिन्दुस्तान के बंटवारे की मांग कर रही थी।

गांधीजी बंटवारे के लिए राजी नहीं हुए। आजादी मिलने में देरी होते देखकर कुछ कांग्रेसी लोग भी बंटवारे के लिए राजी हो गये। जल्दी-से-जल्दी अपना हिस्सा घेरने के फिराक में हिन्दू और मुसलमानों में मार-काट मच गई। मजहब के अंधों ने अपने बैरियों को गाजर-मूली की तरह काट दिया। उनके सिर पर खून सवार हो गया। पंजाब की धरती लाल हो गई। नदियां खून से भर गईं। शहर के शहर जलकर भस्म हो गए। गांव उजड़ गए, परिवार टूट गए। मुसलमानों के हाथ खून से इतने भर गए थे कि हिन्दू और सिक्ख बहुत डर गए। वे जैसे बैठे थे वैसे ही भागे। इस भागमभाग में घरवाले सब तितर-बितर हो गए। किसी की बीवी छूटी तो किसी का बेटा मौत के घाट उतार दिया गया। किसी के मां-बाप पीछे रह गए तो किसी की बेटी

की इज्जत लुट गई।

सुखविन्दर सिंह भी उन्हीं लोगों में से था जो बंटवारे की वेदना झेल रहा था। निरवैर सिंह पिछली रात आया था। उसने खबर दी थी कि मुसलमान लोग पास के गांव में पहुंच गए हैं। वहां उन्होंने हाहाकार मचा दिया है। कुछ बच्चों को उन्होंने नेजे की नोक पर उछाल दिया है। बहू-बेटियों को घसीटकर अपने घर ले गए हैं। अब वे चीथड़ों को मिट्टी के तेल में डुबोकर गांव जला रहे हैं। यह खबर सुनकर सारा गांव इकट्ठा हो गया। सबकी यही राय बनी कि सवेरा होते ही गांव छोड़ दें। सबने रात-रातभर जाग-कर अपना रुपया-पैसा कमर में कस लिया। जरूरी-जरूरी सामान की पोटली पीठ पर लाद ली। सारे गांव वाले अंधेरे मुंह गांव से चल पड़े।

गांव वालों को भागते देख सुखविन्दर छाती पीट-पीट-कर चिल्लाने लगा—हाय! तुसी कित्थे जा रहे ओ मैंनू छड्ड के? मेरी वौटी दे बच्चा होण वाला है। तुसी दो मिनट वी रुक जाओ ना, तां ओन्नु वी नाल ले चलां। हाय मैं ओन्नु किंवे छड्ड जावां? वैरी उसदे टुकड़े-टुकड़े कर देणगे। बादशाहो। जरा मेरी गल्ल वी सुन लओ तुसी। हाय तुसी ऐने कठोर न बणो। हाय मैं की करां? (हाय तुम मुझे छोड़कर किधर जा रहे हो? मेरी बहू के बच्चा होने वाला है। तुम दो मिनट भी रुक जाओ तो उसे भी साथ ले चलें। हाय मैं उसे छोड़कर कैसे चला जाऊं? दुश्मन उसके टुकड़े-टुकड़े कर देंगे। बादशाहो, तुम लोग जरा मेरी बात भी सुन लो। हाय, तुम लोग ऐसे कठोर न बनो। हाय

मैं क्या करूं ?)

लेकिन गांव वालों को अपनी जान की पड़ी थी। सुखविन्दर की पुकार से उनके कानों में जूं तक नहीं रेंगी। वे सब बदहवास दौड़े जा रहे थे। उन्हें डर था कि पांच-दस मिनट भी रुक गए तो मुसलमान आकर बोटी-बोटी उड़ा देंगे सबकी। रुपया-पैसा तो छीन ही लेंगे, साथ ही जान भी निकाल देंगे। किसी की छाती में खंजर घोपेंगे तो किसी की औरत की असमत लूटेंगे। ऐसे में एक सुखविन्दर के परिवार के लिए पूरा गांव कैसे आहुति दे दे ? जिन सिखों ने औरंगजेब को लोहे के चने चबवा दिए थे, वही सिख इस समय मुसलमानों की चाल के सामने पीठ दिखा रहे थे। वे मन-ही-मन संकल्प ले रहे थे—असी इक वार हिन्दुस्तां दी धरती दे उत्ते पहुंच जाइये फिर देख लवांगे। जिस तरां ऐना जुल्मिआं ने साडे नाल खून-खराबा कीता ए, अस्सी वी ओसे तरां ऐना नाल करांगे। इक-इक नूं देख लवांगे। (हम लोग एक बार हिन्दुस्तान की धरती पर पहुंच जाएं तो फिर देख लेंगे। जिस तरह इन जुल्मियों ने हमारे साथ खूनखराबा किया है, हम भी इनके साथ वैसा ही करेंगे। एक-एक को देख लेंगे।)

जहां हिन्दू या सिखों का बस चला वहां उन्होंने भी मुसलमानों को अछूता नहीं छोड़ा। हिंसा ने, सारे उत्तर-भारत में बहुत भयानक रूप धारण कर लिया था। सुखविन्दर भी खून की होली की चपेट में आ गया था।

सारे गांव वाले सुखविन्दर को छोड़कर चले गए। सुखविन्दर माथा पीटता हुआ घर के अन्दर आया। वह

पीड़ा से कराहती हुई औरत को देखकर रोते हुए बोला—हाय री लाडो, मैं तेरे करके रुकयां होयां वां। तू जल्दी क्यों नई करदीं ? मैं चार वारी दाई दे घर हो आया वां पर दाई वी गांव वालया नाल नठ गयी है। मैं हुण की करां। हुण मैं की करां। हुण मैं ही तेरा वयम (जापा) करांगा। (हाय री लाडो, मैं तेरे लिए ही रुका हुआ हूं। तू जल्दी क्यों नहीं करती ? मैं चार बार दाई के घर हो आया। पर दाई भी गांव वालों के साथ चली गई है। मैं अब क्या करूं ? अब मैं ही तेरा जापा करूंगा।)

सुखविन्दर की औरत मनजीत क्या जवाब देती ? कल शाम से वो दर्दों से तड़प रही थी। नाले की तरह खून बह रहा था। उसकी सारी देह हल्दी की तरह पीली पड़ी थी। उसके शरीर में न जान थी न सोचने की हिम्मत।

एक बच्चा उसकी ओढ़नी पकड़कर खींच रहा था—बीबी, तू बोलदी क्यूं नई ? (बीबी तू बोलती क्यों नहीं ?)

दूसरा बच्चा जमीन पर पड़ा रो रहा था। चिल्ला रहा था—मैंनूं भुख लग्गी ए। बीबी, तू मैंनूं रोटी क्यूं नई देंदो ? (मुझे भूख लगी है। बीबी, तू मुझे रोटी क्यों नहीं देती ?)

तीसरा बच्चा रसोई में कुछ ढूंढ़ने की खातिर बरतनों को गिरा रहा था।

चौथा बच्चा गला फाड़-फाड़कर रो रहा था। उसकी बड़ी बहन ने चुप कराने के लिए उसके गाल पर दो चपत जड़ दी थी।

उससे भी बड़ी बहन दरवाजे के सहारे खड़ो, बीबी की

तरफ टकटकी लगाए देख रही थी। उसकी सिसकियां रोके नहीं रुकती थीं।

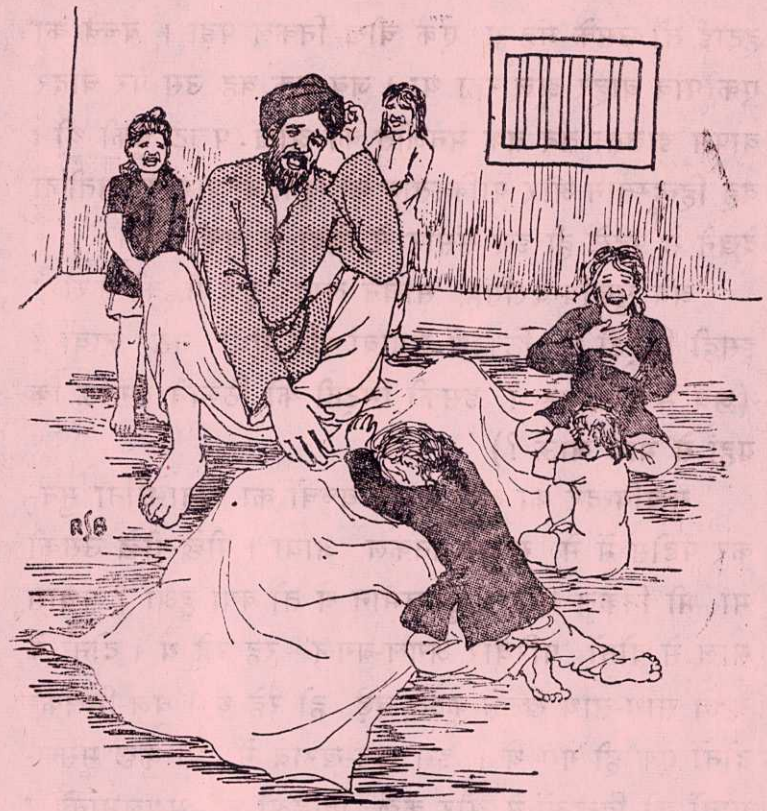

सबसे बड़ी बहन तो बीबी की छाती पर ही गिरी जा रही थी।

लेकिन बीबी को होश कहां था? सुखविन्दर सिंह बेहद परेशान था। किसको संभाले, कैसे संभाले? क्या करे? क्या न करे? भाग ले यहां से या यहां रहकर मुसीबत का सामना करे। उसने रोते हुए मनजीत से कहा— "हुण मैं ही तेरा वयम (जापा) निपटावांगा। (अब मैं ही

तेरा जापा निपटाऊंगा।)

जब सुखविन्दर ने मनजीत के पैरों के ऊपर से चादर हटाई तो उसके मुंह से एक चीख निकल पड़ी। बच्चे का एक पांव बाहर झूल रहा था। जब तक वह उस पर चादर वापस डालता तब तक मनजीत की आंखें पलट चुकी थीं। वह हिन्दुस्तान और पाकिस्तान का खूनी बंटवारे का नतीजा देखने से पहले ही इस संसार से विदा ले चुकी थी।

अब सुखविन्दरसिंह सोचने लगा—हुण मैं की करां? इसदी मिट्टी नू ठिकाणें लगावां कि ऐथों नठ जावां? (अब मैं क्या करूं? इसकी मिट्टी को ठिकाने लगाऊं कि यहां से भाग जाऊं?)

सुखविन्दर का और उसके बच्चों का रोना-धोना सुनकर पड़ोस में से सलीम निकल आया। पीछे-पीछे उसकी मां भी निकल आई। मुसलमान थे तो क्या हुआ? पचास साल से दोनों परिवार अगल-बगल रह रहे थे। दोनों के बच्चे साथ-साथ खेलते-कूदते बड़े हो रहे थे। घुल-मिलकर दोनों एक हो गए थे। इस खून-खराबे में भी कुछ मुसलमानों को हिन्दुओं से और कुछ हिन्दुओं को मुसलमानों से हमदर्दी तो थी ही। मगर कोई किसी की सहायता नहीं कर सकता था। अगर कोई छिप-छिपाकर किसी की सहायता कर भी देता तो उसकी बिरादरी के लोग उसे भी मार डालते। फिर भी जहां एक ओर हैवानियत नंगा नाच नचा रही थी, वहां दूसरी ओर इन्सानियत भी अपना रंग जमा रही थी। सलीम की मां डर के मारे कई दिन से घर में छिपी बैठी थी। उसने बच्चों को भी बाहर नहीं निकलने

दिया था। लेकिन अब उससे न रहा गया। वह सलोम के पीछे दौड़ी चली आई।

मनजीत की मिट्टी पड़ी देखकर उसका मुंह खुला का खुला रह गया। वो सुखविन्दर से बोली—भ्रा जी, तुसी मैनूं क्यूं नहीं बुलाया? असी ते डरदे सी कि कोई मुसलमान सानु त्वाडे नाल वेख के सानूं वी ना मार दये। ऐसे डर तो असी घर दे बाहर नहीं निकले। असी ते समझदे सी कि तुसी घर

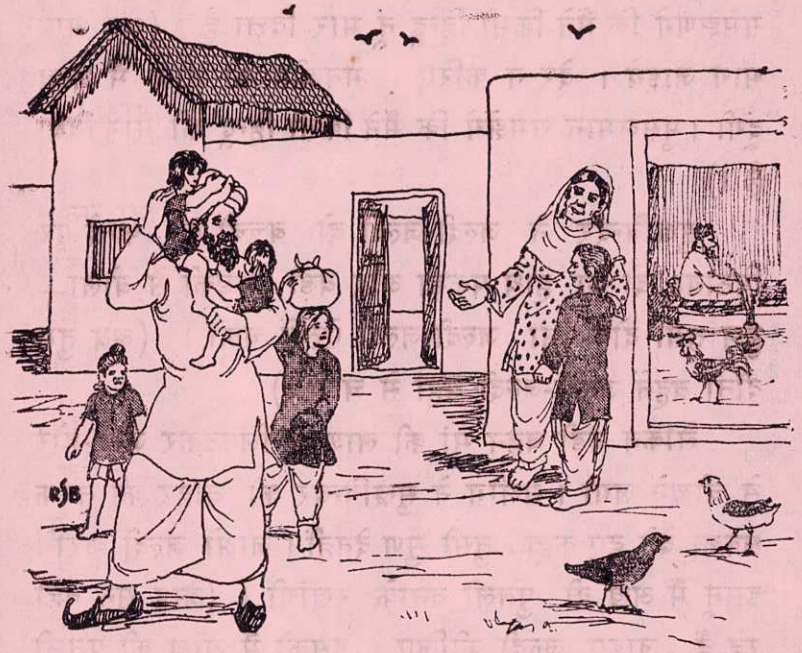

नूं छड्ड के चले गये हो। हुण तुसी पग जाओ। नहीं तो तुसी जान तों हत्थ धो बैठोगे। जरा रुको। (भाई जी, आपने मुझे क्यों नहीं बुलाया? हम तो डरते थे कि कोई मुसलमान हमें तुम्हारे साथ देख हमें भी न मार दे। इसी डर से हम घर से बाहर नहीं निकले। हम तो समझ रहे थे कि आप

घर छोड़कर चले गए हैं। अब आप भाग जाइये। नहीं तो आप जान से हाथ धो बैठोगे। जरा रुको। कहकर सलीम की मां अपने घर गई। चूल्हे के पास उसने सुबह की बनाई हुई रोटियों की गड्डी उठाई। उनके ऊपर ढेर सारा अचार उलटा। फिर उन्हें एक कपड़े में लपेट कर ले आई।

वह सुखविन्दर से बोली—हुण तुसी पग जाओ। देर न करो। मनजीत दी मिट्टी मैं जला देवांगी। मुसलमान समझणगे कि मैंने किसी हिन्दू नूं मार दित्ता है। (अब आप भाग जाइये। देर न करिए। मनजीत की लाश मैं जला दूंगी। मुसलमान समझेंगे कि मैंने किसी हिन्दू को मार दिया है।)

सुखविन्दर ने जल्दी-जल्दी दो बच्चों को कन्धे पर बिठाया, दो का हाथ पकड़ा और बड़ी लड़की से बोला—हुण तुसी दोवें पैना जल्दी-जल्दी ऐत्थों चलो। (अब तुम दोनों बहनें जल्दी-जल्दी यहां से चलो।)

लेकिन बड़ी बहन मां की लाश से लिपटकर जोर-जोर से चीखने लगी। सलीम ने सुखविन्दर को बाहर की तरफ धक्का देते हुए कहा—तुसी सुण देनहीं। जाओ जल्दी करो। इसनू मैं अख दी पुतली बनाके रखांगी। (आप सुन नहीं रहे हैं। जाइए, जल्दी कीजिए। इसको मैं आंख की पुतली बनाकर रखूंगी।)

सलीम की बात सुनते ही उस लड़की का सारा खून जम गया। वह भी मां की लाश को छोड़कर बाप के साथ जाने को हुई। जैसे ही वह बाहर की ओर भागी, सलीम की मां ने उसे कमरे के अन्दर धकेल दिया। उसने

सुखविन्दर से कहा—प्रा जी, तुसी ऐने वड्डे होके वी नासमझी करदे हो। रस्ते विच कोई मुसलमान इसदी मिट्टी खराब कर देवे, ऐदे नालों ते एही चंगा है कि तुसी ऐनूं साडे कोल ही छड्ड देओ। मैं इसनू सलीम दी बीवी बनाके अपनी हथेली ते रखांगी। (भाई जी ! आप इतने बड़े होकर भी इतनी नासमझी करते हैं। रास्ते में कोई मुसलमान इसकी मिट्टी खराब कर देवे, इससे तो यही अच्छा है कि आप इसे हमारे पास ही छोड़ देवें। मैं इसको सलीम की बीवी बनाकर अपनी हथेली पर रखूंगी।)

सलीम और सलीम की मां दोनों ने सुखविन्दर और उसके बच्चों को किसी तरह घर के बाहर खदेड़ दिया। वे आंसू बहाते हुए बोले—अगर असी जिन्दा बच गए ते असी फेर कदी त्वानूं मिलांगे। (अगर हम जिन्दा बच गए तो फिर कभी आपसे मिलेंगे।)

सुखविन्दर को समझ नहीं आया कि सलीम की मां की यह नेकनीयती थी या बदनीयती। लड़की को रोककर उसने लड़की को चिथड़े-चिथड़े होने से बचाया था या हिन्दू लड़की को मुसलमान बनाकर उसका धरम बिगाड़ा था। ज्यादा सोचने का समय सुखविन्दर के पास नहीं था।

सुखबिन्दर बाकी बच्चों को लेकर भागने लगा। उसकी इच्छा थी कि किसी तरह गांव वालों का साथ पकड़ ले तो अच्छा होगा। लेकिन गांव वालों का साथ पकड़ने की इच्छा करना तो सुखविन्दर की भूल थी। अगर सुखविन्दर भाग रहा था तो गांव वाले भी कोई धीरे-धीरे नहीं चल रहे थे। नतीजा यह हुआ कि सुखविन्दर भटक गया और थककर चूर

हो गया। दोनों बच्चों को कन्धे पर उठाये-उठाये वो कितनी दूर भागता ? किस तरह भागता ? फिर पैदल चलने वाले

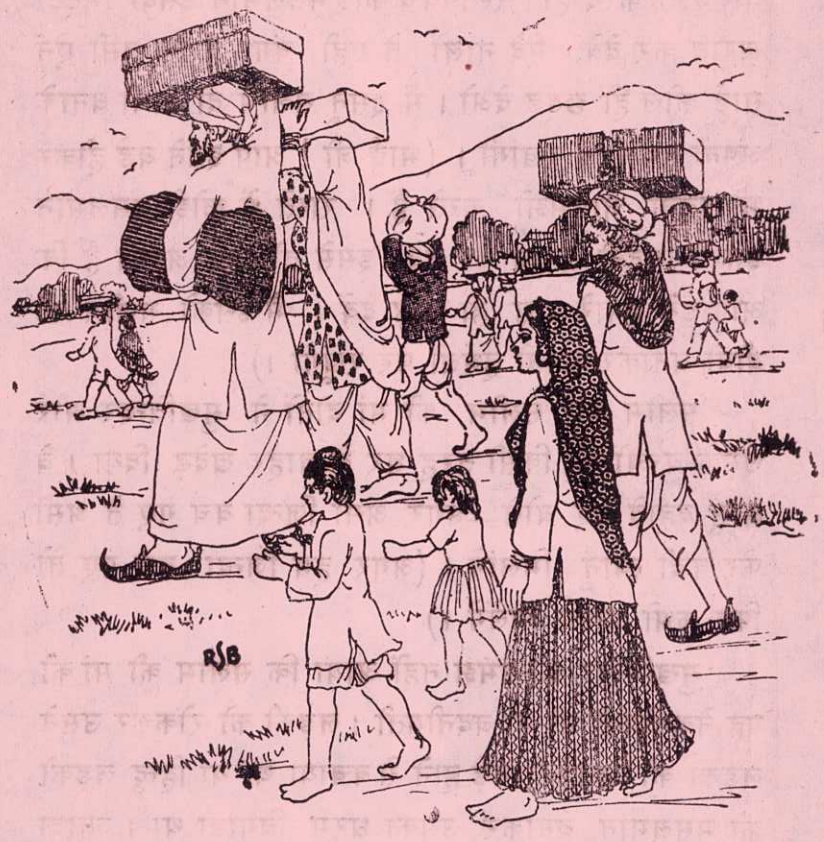

बच्चे भी, उसके साथ नहीं भाग पा रहे थे। उनमें से कोई रो रहा था तो कोई बार-बार पिछड़ रहा था। कोई रोटी के लिए चिल्ला रहा था तो किसी का गला सूखा जा रहा था।

इतने में सुखविन्दर को पास ही कहीं से 'अल्ला हो अकबर' का शोर सुनाई दिया। सुखविन्दर क्या करता ? अकेला होता तो लड़ लेता। पर अब बच्चों को बचाए

कि लड़े ? भय से वह कांपने लगा। जल्दी-जल्दी वह एक पेड़ पर चढ़ गया। दो बच्चे भी उसके साथ चढ़ गए। लेकिन दो छोटे बच्चे नीचे ही रह गये। सुखविन्दर हाथ बढ़ाकर इन्हें खींचना चाहता था, पर वे पकड़ में नहीं आए।

उन बच्चों की बहनें भी रोती-चिल्लातीं नीचे ही रह गईं, वे उन दोनों छोटे भाइयों से लिपट गई थीं। वे किसी भी

कीमत पर उन दोनों मासूम बच्चों को छोड़ने को तैयार नहीं थीं। इतने में खून से भरे नेज़े, तलवार, छुरी, चाकू लिये मुसलमानों का दल वहां आ गया। वे दूसरे गांव को लूटने और खाली कराने जा रहे थे। दोनों बच्चे उनके रास्ते में आ गए। उन्होंने बच्चों को ठोकर मार दी। बाकी लोग बच्चों को रौंदते हुए चले गये। एक ने भागती हुई एक लड़की की कलाई पकड़ ली और घसीटते हुए अपने साथ ले गया। दूसरी लड़की के जिस्म से वहशियों ने ऐसा खेल खेला कि उसने वहीं दम तोड़ दिया।

पेड़ पर चढ़े हुए सुखविन्दर के मुंह से रोना फूट पड़ा। उसने अपने साफे को मुंह में ठूंसकर किसी तरह अपना रोना दबाया। बाकी दोनों बच्चों के मुंह भी अपनी हथेलियों से बन्द कर दिये। अगर मुसलमानों को जरा भी अंदेशा होता कि इस पेड़ पर कोई सिक्ख चढ़ा है तो उसे वे जिन्दा न छोड़ते।

जब खून के प्यासे मुसलमानों का जत्था वहां से निकल गया तब सुखविन्दर नीचे उतरा। वह मरी हुई चाल से आगे बढ़ने लगा। अब उसे अपनी जान की ज्यादा परवाह नहीं थी। उसकी बीवी मर गई थी। दो लड़कियां मुसलमानों के हाथ चली गईं। दो बच्चे पांवों से कुचल गए। एक लड़की की क्या गत बना दी इन कुत्तों ने। अब वह जीकर क्या करेगा? इसलिए अगर मुसलमान उसे मार भी दें तो उसे कोई गम नहीं। फिर भी जब तक वह जिन्दा है तब तक बाकी दोनों बच्चों के लिए उसे आगे बढ़ना ही पड़ेगा।

सुखविन्दर बढ़ता जाता था और सोचता जाता था कि

दो बच्चे होने के बाद ही उसकी बेबे ने कहा था—पुत्तर तेरी वोटी दे शरीर विच हुण बिल्कुल खून नहीं रया। हुण तू औलाद पैदा करनी बन्द कर दे। दुःखां भरी दस औलाद नालो हंसदी-खेलदी इक औलाद चंगी। हाय बेबे मैं ए की कर दित्ता ? मैं तेरी गल न सुनी। इसदा नतीजा मैं अज भुगत रया आं अगर मेरी औलाद घट हुंदी ते अज असी गांव वालयां नाल ही नठ सकते सी। लेकिन मेरी तो मत मारी गई सी। मैंने बेबे दी गल बिलकुल वीं नईं सुनी। हुण की करां ? अगर मैं जिन्दा रया ते मैं दुनिया नू ए संदेश देवांगा कि ज्यादा औलाद पैदा नहीं करनी चाई दी। औलाद ते थोड़ी ही चंगी। अगर मेरे इक या दो बच्चे होंदे ते मैं ऐत्थों अज दस मुसलमानां नूं मार के जांदा। लेकिन मैं ऐनी सारी औलाद नूं नाल ले के किस तरा लड़ाई करदा। मेरी ते सारी जान और ताकत ऐना बच्च्यां विच वंडी गई सी। हुण ते रब मैं गुनहगार हां। जो भी दंड देवोगे मैं ओनू भुगतांगा। (बेटे, तेरी बहू के शरीर में अब बिल्कुल खून नहीं बचा। अब तू बच्चे पैदा करने बन्द कर दे। दुःखों भरी दस औलाद से हंसती-खेलती एक औलाद भली। हाय मां, मैंने यह क्या किया ? मैंने तेरी बात नहीं सुनी। इसका नतीजा मैं आज भुगत रहा हूं। अगर मेरे कम सन्तान होती तो आज हम गांव वालों के साथ ही भाग जाते। लेकिन मेरी मत मारी गई थी। मैंने मां की बात बिल्कुल नहीं सुनी। अब मैं क्या करूं ? अगर मैं जिन्दा रहा तो दुनिया को यह सन्देशा देऊंगा कि ज्यादा औलाद पैदा नहीं करनी चाहिए। औलाद थोड़ी ही भली। अगर मेरे एक या दो बच्चे होते तो

मैं इन मुसलमानों को मारकर यहां से जाता। लेकिन मैं इतनी सारी औलाद को मरवाकर किस तरह लड़ाई करता? मेरी तो सारी जान और ताकत इन बच्चों में ही बंट गई थी। अब तो भगवान मैं गुनहगार हूं। जो भी दंड देओगे, मैं उसे भुगतूंगा।

किसी ने ठीक कहा है—

छोटा परिवार सुखी परिवार ।।

यह सोचकर सुखविन्दर ने फिर से किसी तरह ताकत बटोर ली। वह दोनों बच्चों को कौली में भरकर तेज-तेज चाल चलने लगा। □

छोटे-छोटे फूलों-भरा झाड़

भजनलाल गांव का सबसे बड़ा साहूकार था। खाने-पहनने की उसके पास कोई कमी नहीं थी। वह अपनी मां का इकलौता बेटा था। उसका बाप भी अपने माता-पिता का इकलौता बेटा था। इसलिए मां-बाप और दादा-दादी की सारी सम्पत्ति उसी को विरासत में मिल गई थी। अकेला होने के नाते उसके लिए वह सारा पैसा ज़रूरत से ज्यादा ही था। इसलिए उसे ज्यादा मेहनत नहीं करनी पड़ती थी। वह रोज सवेरे दूध बादाम खाकर अखाड़े जाता था, डण्ड पेलता था, उठक-बैठक लगाता था। खिलाई और कसरत इन दोनों चीजों की वजह से उसके चेहरे पर जो रौनक आई हुई थी वह गांव के और किसी भी नौजवान के चेहरे पर नहीं थी। पहले और अकेले फूल की महक और चमक मन में सीधे जा बसती है।

जब भजनलाल का विवाह हुआ तब कई दिन तक शहनाई बजती रही। गरीब मोहताज अपने दुपट्टे में लड्डू-पूरी बांध-बांधकर ले जाते रहे। सारा गांव भी कई बार खाना खाने के लिए इकट्ठा हो चुका था। आज लगन है, उसका भोज है, तो कल सगाई आएगी, उसको ज्योनार

होगी । आज बारात चढ़ेगी उसकी दावत होगी। कल नई बहू आएगी तो कल उसका खाना होगा इत्यादि, इत्यादि। कहीं सोहन हलवे की खुशबू आ रही थी, तो कहीं मोहनभोग की, कहीं रसगुल्लों का छेना छन रहा था तो कहीं पूरी या खस्ता कचौरियां उतर रही थीं। कहीं बालूशाही की भरमार थी तो कहीं इमरती की। यहां तक कि पकवानों की खुशबू सारे गांव में फैल गई थी। भजनलाल के माता-पिता अपने इक-लौते बेटे की खुशियों पर जी खोलकर पैसा न्यौछावर कर रहे थे।

जब भजनलाल की घोड़ी दूसरे गांव के सेठ के दरवाजे पर पहुंची तो नाइनें गीत गा रही थीं :

बीबी खेले लौंग के बिरवे तले।
लाडो खेले लौंग के बिरवे तले।
उनके बाबा ने ली है बुलाय
चलो बीबी महलों में,
उनकी चढ़ती आवे बरात
चलो बीबी महलों में.....

लड़की वालों ने पैसा लुटाने में कोई कसर नहीं रखी। 'माया को माया मिले, कर-कर लम्बे हाथ।' इन सब चीजों के कारण भजनलाल ऐसा फूल रहा था मानो उसे कुबेर का खजाना मिल गया हो। बहू के माता-पिता और सास-ससुर सबने मिलकर बहू को ऊपर से नीचे तक सोने से पीलामंढ़ दिया था। जब भजनलाल की बहू घर में आई तो भजनलाल जी के पांव धरती पर सीधे नहीं पड़ते थे। एक तो जवानी, तिस पर बड़े घर की बेटी, ऊपर से खिलते

कमल की-सी खूबसूरती ।

साल-भर होते-न-होते बहू की गोद भर गई । सारे गांव में गौंद और पंजीरी बांटी गई । नाते रिश्तेदारों को तीयलें दी गईं । गरीबों को कपड़े-लत्ते बांटे गए । एक दिन हींजड़ों ने भी दरवाजे पर खूब रौनक की । उन्होंने हथेली बजा-बजाकर गाया—

आ जाइयो लाल, मैं बराजन,
राजा जीवन की थलियां लूंगी,
जच्चा जीवन की बेल,
सात पूत तेरे ते करमा लिखे हैं,
पैर पूजन को तेरे कन्यादान ।
ओढ़ पहन जब-जब ठाढ़ेंगा हिजड़ा,
देगा खूब असीस.....

जब पूरा दिन खूब नाचने-गाने में बीत गया तो भजनलाल के बाप ने उन्हें मुंहमांगा इनाम देकर विदा किया। वो अपने इस पहले पोते पर हजार जान से न्योछावर थे ।

जमाना करवटें ले रहा था । साहूकारी और ब्याज की दर पर सरकार धीरे-धीरे रोक लगा रही थी। आमदनी अब पहले की तरह नहीं रही थी । लेकिन खर्चे बढ़ने के लक्षण दिनोंदिन बढ़ते जा रहे थे, क्योंकि बहू का एक साल का पुत्र जिस तरह दादा-दादी की गोद में खेलता हुआ बढ़ रहा था उसी तरह बहू का बढ़ता हुआ पेट भी अगले बालक के आने की सूचना दे रहा था ।

भजनलाल का पहला बच्चा जब सवा साल का था तभी एक दिन अचानक रात को उसके घर से दूसरे नवजात

शिशु के रोने की आवाज आई । दाई ने उनको जाकर कहा—लड़का हुआ है । पहले सोने का कंगन पहनाओ मुझे, तब बालक का मुंह दिखाऊंगी ।

दादा-दादी ने खुशी से बड़े जोर से तालियां बजाईं, परन्तु दाई की मुंहफट मांग सुनकर सभी सहम गए । पहले पोते में जितना उन्होंने खर्च कर दिया था उसकी पूर्ति अभी तक नहीं हुई थी । अब इस बालक के पैदा होने पर भी खर्चा होगा ही ।

बच्चा होने की खबर सुनकर हींजड़े तुरंत फिर से आकर जमा हो गए । और उन्होंने खूब हथेलियां बजा-बजा कर गाना गाया । कमर हिला-हिलाकर नाच नाचा, आंखें मटका-मटकाकर दादा-दादी से मांगा । इस बार रात होने से पहले ही भजनलाल ने हींजड़ों को विदा कर दिया । हींजड़ों ने बहुत खुशामद-मिन्नत की, लेकिन न तो उन्हें पहले की तरह कपड़े मिले और न ही रुपये । न उस तरह मिठाई खाने को मिला, न पीने को शरबत । गांव के लोगों को भी इस बार गोंद की पंजीरी नहीं मिली । अब की बार उन्हें मिले बूंदी के सादा लड्डू ! रिश्तेदारों को भी उस हिसाब से तियलें नहीं मिलीं । फिर भी बहू की खिलाई-पिलाई में सास ने कोई कसर नहीं रखी । और बच्चों को गोदी में घुमाने में दादा ने कोई कमी नहीं रहने दी ।

अभी साल ही हुआ था, दूसरा बच्चा धीरे-धीरे चलना सीख ही रहा था कि तीसरा बच्चा भी अपनी मां की कोख में हिलने-डुलने लगा । सुन-सुनकर सास हंसती थी और बहू को आशीर्वाद देती थी—'दूधों नहाओ पूतों फलो ।'

सुबह-सुबह बहू मुंह को घूंघट की ओट में छिपाये सास जी के पांव छूती। रोज सास उसे आशीर्वाद देती 'सात पूतों की मां हो।' सास को यह पता नहीं था कि इस बार बहू के गर्भ में पुत्र नहीं बल्कि पुत्री पल रही थी। वैसे भी वह

आज के परिवार में मगन थी। कल क्या होगा यह साफ-साफ देखने की अकल उसमें नहीं थी। जो भी था, बहू की देख-भाल जारी थी और दोनों बच्चों की सार-संभाल चल रही थी।

तीसरी बार जब बहू ने बच्चा जना तो घर में थाली बजने की आवाज नहीं सुनाई दी। नए शिशु का रोना तो

सुनाई दिया परन्तु थाली बजने की आवाज नहीं सुनाई दी। इससे गांव वाले समझ गए कि साहूकार के घर में इस बार कन्या ने जन्म लिया है। साहूकार और उसकी औरत का चेहरा उतर गया था। क्योंकि जहां पहली दो सन्तानें उनकी तिजोरी भरने आई थीं, वहां यह तीसरी सन्तान तिजोरी खाली करवाने आई थी। जिस तरह उनकी बहुएं गहनों से लद करके आएंगी इस प्रकार कन्या को गहनों से लाद कर विदा करना होगा। सोने का भाव बढ़ता जा रहा था।

सारे गांव में यह खबर तुरंत आग की तरह फैल गई कि साहूकार के यहां कन्या ने जन्म लिया है। किसी ने कहा कि साहूकार की मूंछें नीची हो गईं। किसी ने कहा, भजनलाल का तना हुआ सिर झुक गया है। किसी ने कहा —अब तक तो साहूजी लेने की ही बात करते थे। अब जब देने पड़ेंगे तब साहूजी को पता लगेगा आटे दाल का भाव। इस तरह जितने मुंह उतनी ही बातें थीं।

लेकिन भजनलाल की मां ने इस बार भी बड़े लाड़-प्यार से बच्ची को अपनी छाती से लगा लिया और कहा लड़की हमारे घर हुई है, और दहशत गांव वालों को हो रही है।

इस बार बहू को जल्दी जल्दी जच्चा-खाना से बाहर निकाला गया। क्योंकि अब सास की हड्डियां भी तो धीरे-धीरे जवाब देती जा रही थीं। नौकरों-चाकरों को भी पहले की तरह इनाम-विनाम नहीं मिला था। इसलिए वो भी अब इन नए बच्चों को खिलाने से कतराते थे। इसीलिए अब घर के खर्चों पर रोक लगा दी गई थी। ऐशो-आराम

पर पाबंदी लग गई थी। लड़की की शादी के लिए अभी से पैसा जोड़ना होगा इसलिए धाय की बजाय इस बच्ची को उसकी मां को ही खिलाना पड़ा। बच्ची सदा अपनी मां से चिपटी रहती और उसका खून पीती रहती जो दूध बनकर मां की छाती में भर जाता था।

हांफते-हांफते बहू ने एक दिन कहा—

सुनो जी ! अब सहा नहीं जाता

दर्प से भजनलाल तमके, तड़के। बोले—

जिसने है मुंह दिया, वही देगा रोटी भी।

मत अब कुछ बोलना कभी।

रह गई बहू सहमी-सहमी।

भजनलाल की हवेली के पीछे नौकर-चाकर रहते थे। रात को मस्ती में गाते-बजाते थे। भजनलाल की औरत उस गीत को सुनती और गुनगुनाती—

सासू समझा अपने बेटे को, कुछ इन्तजाम कर ले जी,
पांच बरस में तीन बालकन की, बन गई मैं महतारी जी।
कहां फंसा दई मां बापन ने, मैं तो भली कुंआरी जी।
कच्चे पक्के मेरे बालक रोवें, कैसे न्यार कटाऊं जी।
गर सार में भूखे रह गए ढोर, तो तेरा पूत लड़ेगा जी।

उसके इस गुनगुनाने का भजनलाल पर कोई असर न पड़ा। इस बार भी पहली वाली कहानी घटी। लड़की अभी छह महीने की भी नहीं हुई थी कि भजनलाल की बहू का पांव फिर से भारी हो गया। इस तरह करते-करते भजनलाल के आंगन में आठ बच्चे लड़ते झगड़ते, दौड़ते भागते, हंसते खेलते बड़े होने लगे।

इन बच्चों में से बड़े दो बच्चे पढ़ने में बड़े ही होशियार निकले क्योंकि उन पर दादाजी की पूरी निगरानी रहती थी। तीसरी लड़की दिन भर मां के साथ कामकाज में लगे रहने और छोटे बच्चों की देखभाल में रहती थी, इसलिए वह भी बड़ी सयानी और समझदार हो गई थी। लेकिन बाकी बच्चों को देखने और धमकाने वाला कोई नहीं था।

जिस घर के आंगन में भजनलाल को सुबह-सुबह मक्खन और मलाई खिलाई जाती थी अब उसी घर में आठ बच्चों को घी निकला हुआ दूध पीने को मिलता था। बच्चों की मां जिस तरह बच्चों को खाना देती थी उससे ऐसा लगता था कि घर में रोटी के लाले पड़ गए हैं।

भजनलाल की औरत की सेहत तो बुरी तरह टूट चुकी थी, उसका चेहरा भी एकदम काला पड़ गया था। इसके इलाज ही इलाज में कितना पैसा चुक गया था। उसे आराम करने का समय बिल्कुल नहीं मिलता था और बच्चों की चिल्लपों ऊपर से अलग, इसलिए हर समय वह झल्लाई-सी रहती थी। कहां तो इस हवेली में शांति ही शांति नजर आती थी कहां अब उसी हवेली में आठ बच्चों का रोना चिल्लाना सुनाई देता था! वो सोचती है कि क्या ठीक है समझ नहीं आता।

कभी-कभी भजनलाल की औरत की आंखों से आंसू निकल पड़ते। वह कहती—हाय राम मैं कहां फंस गई। आते ही यह बला मेरे सिर आ पड़ी। आठ बच्चों को लेकर तो मैं अपने पीहर भी नहीं जा सकती। वहां पर ये इसी तरह रोयेंगे-धोयेंगे। यहां रहूं चाहे वहां रहूं, भुगतना तो मुझे ही

है।

बच्चे फूल हैं, महकते हैं,
घर में बसन्त लाते हैं,
लेकिन ढेर सारे फूलों को
महकाने में
जमीन की ताकत तो
खत्म हो जाती है।
कैसे संभव है सबकी देखभाल,
पढ़ाई लिखाई, खिलाई पिलाई,
सबको नियम कानून में बांधना,
कैसे संभव है ?
समझाना-सिखाना,
मनुष्य बनाना,
इतने सारे बच्चों को ?

खैर किसी तरह से उसी हवेली में भजनलाल और उसकी औरत को बच्चों के बीच मरते-खपते पच्चीस साल कट गए। बच्चे सब बड़े-बड़े हो गए। पांच की तो शादी भी हो गई। लेकिन किसी भी शादी में वह रौनक नहीं आई जो भजनलाल की अपनी शादी में आई थी। अब तो गांव के बड़े-बूढ़े अपने बच्चों को, परियों की कहानी की तरह सुनाया करते हैं और बताते हैं कि उन्होंने भजनलाल की शादी में, उनके पहले लड़के की पैदाइश में किसी तरह मौज उड़ाई। किस तरह पटाखे छूटे थे और किस तरह से दो बन्दूकची दूल्हे के घोड़े के दोनों ओर तैनात थे। वे बताते हैं कि भजनलाल के पहले लड़के के पैदा होने पर देसी घी,

बादाम और गोंद की पंजीरी बांटी गई थी और सबने खूब खाई थी।

घर की आमदनी में गुजारा नहीं होता था। इसलिए उनके बड़े लड़के ने शहर जाकर नौकरी कर ली थी। आधी जमीन जायदाद तो लड़कियों की शादी करने में ही बिक गई। बाकी जमीन से इतनी कम आमदनी होती थी कि हवेली में टिक पाना भी मुश्किल हो गया था। आखिर भविष्य की चिंता करते-करते एक दिन भजनलाल को दिल का बड़ा दौरा पड़ा तो वह वहीं ढेर हो गया। किसी ने ठीक ही कहा है—'तेते पांव पसारिए जेती लम्बी सौड़।' बच्चे इतने ही पैदा करने चाहिए, जितने आदमी ठीक से पाल-पोस सके।

बाप के मरते ही बच्चों में झगड़ा शुरू हो गया और सारी जमीन के बंटवारे की बातें होने लगीं। लेकिन फैसला किसी तरह नहीं हो पाया। तीनों लड़कों ने अपनी पत्नियों के गहने गिरवी रखकर अदालत की फीस जमा कर दी और एक दूसरे के खिलाफ मुकद्दमे दायर कर दिए। सबसे बड़े लड़के ने जो एक बार शहर की ओर रुख किया तो उसने फिर लौटकर गांव की तरफ मुंह भी नहीं किया। बाकी सात जनें रोज अदालतों के चक्कर काटते थे और अपनी जूतियां चटखाते थे। न खेती होती थी न किसी और तरह से आमदनी—सबके सब मुकदमों के कागजात तैयार करने में जुटे रहते थे।

भजनलाल की पत्नी ये हालात देख-देखकर आठ-आठ आंसू बहाती रहती। धुएं भरी रसोई में रोटी सेंकती जाती थी और सोचती जाती कि आदमी में अधिक सन्तान को

इंसान बनाने की कूबत हो तभी इतनी औलाद पैदा करे, कूबत न हो तो, पैदा न करे इतनी औलाद। किसी ने सच कहा है—दवा जब दर्द बन जाए तो उसे बदल देना चाहिए। अब अधिक सन्तान पैदा करने की रीति बदल देनी चाहिए। केवल दो ही पूतवाली रीति भली। ठीक है छोटे-छोटे बे-रौनक फूल भरे झाड़ से तो, एक खुशबूदार गुलाब अच्छा। हाय मेरे भी :

दो ही फूल खिलते आंगन में
तो कितनी बहार रहती जीवन में □

सगर के साठ हजार पुत्र

हजारों साल पहले की बात है। एक राक्षस था—विरतासुर।

विरतासुर बहुत ताकतवर और दुष्ट राक्षस था। वह जब-तब देवताओं को सताता रहता था। उनके यज्ञ और हवन में बाधाएं डालता रहता था। मामूली आदमियों को तो खा ही जाता था। उसका एक साथी था कालिकेय। कालिकेय के साथ मिलकर तो विरतासुर और भी दुष्ट हो जाता था। एक तो करेला और दूसरे नीम चढ़ा! ये दोनों मिलकर तो पृथ्वी पर कहर ही ढा देते थे। धरती पर बचाओ-बचाओ की पुकार होने लगी। देवता भय से इधर-उधर कांपने, छिपने लगे थे। विरतासुर और कालिकेय मूंछों पर ताव देते हुए धरती पर मजे से घूमने-फिरने लगे।

सारे देवता स्वर्ग के राजा इन्द्र के पास पहुंचे। वहां उन्होंने इन्द्र की खूब पूजा और सेवा की। इन्द्र महाराज प्रसन्न होकर बोले, हे देवताओ! बोलो तुम्हें क्या कष्ट है जो तुम मेरी इतनी पूजा कर रहे हो?

देवताओं ने अपनी मुसीबत का सारा हाल कह

सुनाया। सुनकर राजा इन्द्र बोले, तो तुम मुझसे क्या चाहते हो ?

हम चाहते हैं विरतासुर और कालिकेय की मौत। हम चाहते हैं अपनी सुरक्षा की वापसी। देवताओं ने रोते हुए कहा।

इन्द्र ने कहा—ऐसा ही होगा, लेकिन इसके लिए उपाय करना होगा। विरतासुर और कालिकेय को हम मामूली अस्त्र-शस्त्रों द्वारा नहीं मार सकते। इसके लिए हमें एक अनोखा उपाय करना पड़ेगा। त्याग और बलिदान भी करना होगा।

हम तैयार हैं महाराज। हमें बताइए तो हम पाताल लोक भी जा सकते हैं। सात समुद्र पार किसी विषैले नाग के पहरे में रखे, किसी पिंजरे में बन्द तोते में यदि विरतासुर के प्राण बसते हों तो बताइए, हम वहां जाकर उस तोते को भी मार सकते हैं। देवताओं ने हाथ जोड़कर कहा।

नहीं, ये सब परियों की कहानियों में होता है। विरतासुर की जान तोते को मारने से नहीं जायेगी। उसकी जान दधीचि मुनि के त्याग से जाएगी। इन्द्र ने विचारते हुए कहा।

दधीचि मुनि का त्याग ? बहुत पहुंचे हुए तपस्वी हैं। लेकिन वे क्या करेंगे इसमें। देवताओं ने अचरज से कहा।

उनकी हड्डियों से यदि ब्रह्माजी शस्त्र बनाएं तो उस शस्त्र से विरतासुर का सफाया किया जा सकता है। नहीं तो दूसरा कोई उपाय नहीं है। कहकर राजा इन्द्रदेवता वहां

से चले गये। सभी देवता बड़ी गहरी चिन्ता में पड़ गए। असल में, दधीचि मुनि इतने पहुंचे हुए योगी थे कि उन्हें कोई मार नहीं सकता था। अब सवाल था कि उनकी हड्डियां कैसे मिलें ?

फिर भी देवताओं ने हिम्मत न हारी। वे दधीचि मुनि के पास गए। उन्हें प्रणाम किया फिर हाथ जोड़कर उन्हें अपनी सारी मुसीबत बयान की।

यह सुनकर दधीचि मुनि ने कहा, धरती पर दानवता का नाश होना ही चाहिए और देवताओं की जीत अवश्य होनी चाहिए। बुराई पर अच्छाई की विजय होनी ही चाहिए। संसार के जीवों को राक्षसों से छुटकारा मिलना ही चाहिए। मेरा भाग्य बहुत अच्छा है कि मेरी हड्डियाँ विरतासुर और कालिकेय को मारने के काम आ सकती हैं। यह कहकर दधीचि मुनि ने समाधि लगा ली। क्षण-भर में उनके प्राण-पखेरू उड़ गए।

दधीचि मुनि के इस त्याग से देवता बहुत खुश हुए। उनकी आधी मंजिल पार हो गई थी।

देवताओं ने उनकी हड्डियाँ ले जाकर इन्द्र को दे दीं। इन्द्र ने उन्हें ब्रह्माजी को दे दिया। ब्रह्माजी ने उनका शस्त्र बनाया। उस शस्त्र से देवताओं ने विरतासुर और कालिकेय को मारकर उनके टुकड़े-टुकड़े कर दिये। ऋषि-मुनियों की सुख शान्ति उन्हें वापस मिल गई।

मुसीबतें फिर भी खत्म नहीं हुईं। विरतासुर और कालिकेय तो मौत के घाट उतर गए। परन्तु इनके दूसरे छुटपुट साथी समुद्र में जा छिपे।

रात को सब राक्षस अपने छिपे हुए स्थानों से निकल आते थे। बाहर निकल कर ये सोये हुए आदमियों और देवताओं को खा जाते थे। दिन में फिर से सागर में जा छिपते थे।

लोगों ने अपने साथियों की जब यह गति देखी होती तो उन्होंने फिर से भगवान को पुकारना शुरू कर दिया— "हे भगवान् तू ही हमारी रक्षा कर।"

सारे देवता फिर भागे ब्रह्माजी के पास। ब्रह्माजी पड़े बड़ी मुश्किल में। अब क्या किया जाए? दधीचि की हड्डियों से बना शस्त्र तो अभी भी रखा है, लेकिन उस शस्त्र से सामने लड़ते हुए राक्षसों को ही मारा जा सकता है। पानी के अन्दर छिपे हुए राक्षसों का विनाश कैसे किया जाये? बहुत सोच-विचार कर ब्रह्माजी को एक उपाय सूझा। उन्होंने देवताओं से कहा—तुम लोग अगस्त्य मुनि के पास जाओ। इस समय वह ही तुम्हारा भला कर सकते हैं।

सारे देवता आश्चर्य में पड़ गये। जिस काम को स्वर्ग के राजा इन्द्र भी नहीं कर सकते उसे अगस्त्य मुनि कैसे कर सकते हैं? वे तो ऋषि हैं। वे किसी को कैसे मार सकते हैं? देवताओं की यह बात सुनकर राजा इन्द्र बोले — अगस्त्य मुनि में ऐसी अद्भुत शक्ति है कि वे सारे समुद्र को सोख सकते हैं। जब समुद्र का पानी सूख जायेगा तो राक्षस कहां छिपेंगे?

ये सुनकर सारे देवता अगस्त्य मुनि के पास गये और उनको अपनी दुःखभरी गाथा सुनाई। अगस्त्य मुनि देवताओं

का दुःख दूर करने को तैयार हो गए। उन्होंने समुद्र का अथाह जल पी लिया।

अब राक्षसों के छिपने को कोई स्थान न रहा। देवताओं ने एक-एक राक्षस को पकड़ कर मार दिया।

जब समुद्र का पानी सूख गया तो पानी के सभी जीव तड़प-तड़प कर मरने लगे। वर्षा भी होनी बन्द हो गई। इससे सभी को अपार दुःख का सामना करना पड़ा। उन्हीं दिनों राजा सगर भारत पर राज कर रहे थे। सब ने राजा सगर के पास आकर अपना रोना रोया। राजा सगर के कोई पुत्र न था। समुद्र में पानी भरने के लिए उन्होंने पुत्र की कामना से यज्ञ किया।

राजा सगर की दो रानियां थीं। एक का नाम था विदर्भी और दूसरी का नाम था शैव्या। यथासमय राजा सगर की दोनों रानियां गर्भवती हुईं। रानी विदर्भी ने बहुत से पुत्रों की कामना की। लेकिन शैव्या ने कहा—

पूरे गगन घिरे तारों से,
चांद-सूर्य दो रतन बहुत है।

विदर्भी ने बहुत से पुत्र मांगे थे। उसके साठ हजार पुत्र हुए। शैव्या के केवल एक पुत्र पैदा हुआ।

राजा सगर ने अपने इन साठ हजार पुत्रों से कहा—मैं सागर में फिर से पानी भरने के लिए अश्वमेध यज्ञ करना चाहता हूँ। इसलिए मैं यज्ञ का घोड़ा छोड़ता हूँ। जो भी राजा इस घोड़े को पकड़ ले तुम उसके साथ युद्ध करके घोड़ा छुड़ा लाना।

कुछ दिन पीछे यज्ञ का घोड़ा सगर के पुत्रों की आंखों

से ओझल हो गया। उन्होंने घोड़े को बहुत खोजा पर उन्हें घोड़ा नहीं मिला। वे हाथ मलते हुए अपने पिता के पास वापस लौट आये। उन्हें खाली हाथ लौटा देख उनकी माता ने सोचा, "ऐसे पूतों वाली से तो बांझ भली।"

राजा सगर को बहुत दुःख हुआ कि साठ हजार पुत्र भी यज्ञ के घोड़े को नहीं रोक पाये। उन्होंने उनको फटकारा और फिर से घोड़े को खोज लाने के लिए कहा। घोड़ा खोजते-खोजते सगर के पुत्र सागर तट पर पहुँचे। उन्होंने देखा कि सागर के तल में एक छोटा-सा छेद हो गया है। उसी छेद से राजा के पुत्रों ने देखा कि वहाँ कपिल मुनि विराजमान हैं और उनके पीछे यज्ञ का घोड़ा बंधा हुआ है। राजा सगर के पुत्रों का पारा सातवें आसमान पर चढ़ गया। उन्होंने सोचा कि कपिल मुनि ने ही यज्ञ का घोड़ा चुरा लिया है। उन्होंने क्रोध में आकर मुनि को भला बुरा कह डाला।

कपिल मुनि उनकी कड़वी बातों को क्यों सहन करते? उन्होंने अपने लाल-लाल नेत्रों से जैसे ही राजकुमारों की ओर देखा वैसे ही राजा सगर के साठ-के-साठ हजार पुत्र जलकर भस्म हो गये। जब राजा सगर को यह समाचार मिला तो वे शोक में डूब गए। वे राजा इन्द्र के पास गए और उनसे प्रार्थना की—महाराज, सागर में जल भर दीजिए। मेरे पुत्रों की राख ठिकाने लग जाएगी।

राजा इन्द्र ने कहा—हे राजन्! स्वर्ग से देवी गंगा ही धरती पर उतर सकती हैं और वे ही इस सागर को जल से भर सकती हैं। इसके लिए तुम्हें बहुत मेहनत करनी पड़ेगी

क्योंकि जहां-जहां देवी गंगा बहेंगी वहां-वहां की सारी धरती और जनता पानी में डूब जाएगी। इसीलिए तुम कुछ ऐसा मार्ग बनाओ कि गंगा भूतल पर उतर भी जाएं और कोई डूबे भी नहीं।

जो आज्ञा, कहकर राजा सगर अपने घर लौट गये। राजा की दूसरी रानी शैव्या से केवल एक पुत्र था असमंजस। वह बड़ा बलशाली था। लेकिन यमराज ने उसे बहुत दिन तक धरती पर टिकने नहीं दिया। असमंजस के केवल एक पुत्र था अंशुमाल।

इन्द्र के पास से लौटकर राजा सगर ने अपने एकमात्र पोते अंशुमाल से कहा, गंगा के उतरने के लिए बांध बनाओ। अपने साठ हजार चाचाओं का उद्धार करो।

राजा सगर का पोता अंशुमाल हिमालय पर्वत के उत्तर में गया। वहां उसने गंगा को घने जंगल के बीच में से लाने की कोशिश की। जंगल के घने वृक्षों और लताओं ने गंगा को धीमी करने में भरपूर मदद की। इसी को कहते हैं शिवजी की जटा। लेकिन अंशुमाल अभी यह काम पूरा कर न पाए थे कि उनका भी देहान्त हो गया।

अंशुमाल का स्वर्गवास हो जाने के बाद राजा सगर ने अपने परपोते—राजा दलीप को यह काम सौंपा। राजा दलीप ने गंगा के लिए पहाड़ों में से काफी लम्बा रास्ता निकाल दिया। एक दिन जब वे खड़े काम देख रहे थे तो वे पर्वत की चोटी पर से फिसल पड़े और परलोक सिधार गए।

इसके बाद उनका अधूरा काम उनके एक मात्र पुत्र राजा भगीरथ ने पूरा किया। राजा भगीरथ की अथक

कोशिशों से गंगा मैदानों में उतरी। गंगा इठलाती हुई बहीं। बलखाती हुई आईं, सबके मन को हरती हुई चलीं, उत्तरप्रदेश, बिहार और बंगाल की प्यास बुझाती हुईं सागर में जा गिरी। गंगा के बहाव में राजा सगर के साठ हजार पुत्रों की हड्डियां पानी में बह गईं। उनकी आत्माओं की मुक्ति हुई।

भगीरथ की कठोर मेहनत से गंगा को बहती देखकर राजा सगर ने सोचा, यह अकेला पड़-पड़पोता मेरे साठ हजार पुत्रों से कहीं अधिक अच्छा है :

लव-कुश दो ही थे पर उनसे
सारी सेना का बल हारा
सौ कौरव पुत्रों के आगे
अर्जुन कृष्ण दो स्वजन बहुत थे □

हलुवा कौन खाए ?

एक किसान था। उसका नाम धन्ना था। वह बहुत गरीब था। उसके छह बच्चे थे। तीन लड़के और तीन लड़कियां। लड़कों के नाम थे—रिंकू, टिंकू, पिंकू और लड़कियों के नाम थे—अन्नू, मन्नू, और कन्नू। एक दिन धन्ना की औरत धनिया साहूकार के घर के पास से गुजर रही थी। हवा में बसी हुई हलुवे की महक उसकी नाक में जा घुसी। झट उसके मुंह में पानी भर आया। जिस चीज की खुशबू ही इतनी बढ़िया है तो वह खाने में कितनी अच्छी होगी। यह सोचकर उसने अपने आदमी धन्ना से कहा—अजी सुनते हो जी ! बहुत दिनों से हलुवा खाने को जी चाह रहा है। लेकिन घर में इतना पैसा खर्च हो जाता है कि हलुवा बनाने का सामान कभी नहीं आ पाता। जो भी खाना बनता, वह सब बच्चे चाट-चूट कर खत्म कर देते हैं। हमारा तो कभी पेट भी नहीं भरता।

एक दिन वह किसान अपनी घरवाली से बोला—तू दिन-रात ऐड़ी चोटी का पसीना एक कर देती है। फिर भी हलुवा खाने को तेरी इच्छा कभी पूरी नहीं होती, इसका मुझे बहुत

दुःख हो रहा है।

धन्ना की घरवाली बोली—क्या किया जाए···बच्चों का पेट ही पूरा नहीं भरता। फिर हलुवा कहां से आए? तुम इसकी फिक्र न करो। जब कभी फसल अच्छी होगी तो हलुवा भी बन जाएगा, साथ में पूरी कचौड़ियां भी। ऐसी छोटी-छोटी बातों का दुःख नहीं मनाया करते।·····कहती हुई धनिया वहां से उठ गई। अपने अन्दर से निकलती हुई टीस को उसने अन्दर ही अन्दर दबा दिया। धनिया के दिल से धुआं उठ रहा था।

उसे याद था कि एक दिन सभा में देश के प्रधानमन्त्री कह रहे थे—

हम चाहते हैं कि
न हो किसी की
आंखों में आंसू,
और न किसी के हों
तन पर चिथड़े।
न ही किसी को भूख सताए
न ही बंटवारे के लिए झगड़े हों।
हो सबके रहने को घर
हो हर तरफ सुख और
खुशहाली।
यह तभी मुमकिन है
जब कम हो आबादी।

अच्छी फसल का इन्तजार करते-करते फिर से पूरा साल बीत गया। लेकिन इस बार भी फसल अच्छी न हुई।

कभी अधिक वर्षा हो जाती तो कभी सूखा पड़ जाता था। कभी पानी की कमी से बीज फूटता ही नहीं तो कभी बीज पानी में बह जाता। सहकारी समिति का मोटा कर्जा अलग से चढ़ गया। बैल भी बिल्कुल सूखकर ठठरी हो गये हैं। धन्ना जब कभी भी उनकी तरफ ताकता है उसकी आंखें छलछला आती हैं। वह उन बैलों को अपना बच्चा मानता है। जब कोई उससे पूछता है—कितने बच्चे हैं तुम्हारे ? तो वह एक हाथ की पांच और दूसरे हाथ की तीन अंगुलियां दिखा देता है।

एक दिन धन्ना ने पड़ोसी मंगतू से दो रुपये उधार लिए। रुपये लेकर बाजार गया और बाजार से सूजी, चीनी, घी और आटा ले आया।

शाम को बच्चे जब बाहर खेलने गए, किसान ने सारा सौदा अपनी औरत के हाथ में थमाते हुए कहा—सुन, अरी सुन ! जल्दी जल्दी रोटी पकाकर बच्चों को खिला और सुला दे। खाकर जब वे सो जायेंगे तो हम हलुवा बनाकर खायेंगे। यह सूजी, चीनी और घी छिपाकर रख दो। बहुत थोड़ा-थोड़ा है। इतना थोड़ा कि हम आठों जने उसे नहीं खा सकते। इसीलिए आज तो तू और मैं ही खा सकेंगे। बाद में जब फसल कटेगी तो बच्चों के लिए बना देंगे, और सुन, गांव में एक मण्डली आई है। हम हलुवा खाकर मण्डली में नाच गाना देखने चलेंगे। मैं वहां अभी होकर आया हूं। वहां वे गा रहे हैं—

बलमा अपरेशन करवा ले, अब मेरे जापा बस की नाय
जापे के तो नाम तो सुई मोए, जाड़ा-सा चढ़-चढ़ जाए।
बलमा.....

छह-छह बालक मेरे घर में हो गए, आ गई घणी तबाही ।
दिन भर कोल्हू सी बनी फिरूं मैं, बलमा मैं भर पाई।
गवरमिन्ट ने थारे गांव में, है कम्प दिया लगवाय ।
बलमा अपरेशन करवा ले अब मेरे जापा बस की नाय।

कह कर किसान बाहर चला गया ।

किसान की घरवाली कोने में बैठकर रोने लगी । सोचने लगी कि आज गरीबी ने मेरे आदमी का दिल कितना कठोर बना दिया है कि हम बच्चों से छिपकर खाने की योजना बनाने लगे हैं । खैर, भगवान कभी तो हमारे दिन बदलेगा ही । रात है तो कभी सवेरा भी होगा । अंधेरा है तो कभी उजाला भी होगा । यह सोचकर वह आंसू पोंछती हुई बच्चों के लिए रोटी बनाने उठ खड़ी हुई ।

रात को जब बच्चे सो गए तो किसान ने अपनी घरवाली से फुसफुसाते हुए कहा—उठ ! जल्दी उठ !! हलुवा बना कर जल्दी खा लें । नींद आ रही है ।

उसकी घरवाली भी उठकर बैठ गई और बोली—सुनो, मुझे कड़ाही नहीं मिल रही है । पता नहीं कड़ाही कहां चली गई ।

इतने में रिंकू ने कोने में लेटे-लेटे ही जवाब दिया—मां मैं लाऊं कड़ाही। मुझे मालूम है कड़ाही कहां रखी है ।

मां बोली—ला बेटा ।

जब रिंकू कड़ाही लेकर आया तो मां बोली—आ तू भी बैठ जा । तू भी हलुवा खा लीजो ।

कड़ाही साफ करके किसान की घरवाली बोली—अरे यहां तो सूजी भी नहीं है । सूजी यहां से कहां चली गई ?

इतने में टिंकू उठ कर बोला—मां-मां ! मैं लाऊं सूजी ! मुझे पता है सूजी कहां रखी है ?

मां ने कहा—ला बेटा । तू सूजी ले आ ।

जब टिंकू सूजी लेकर आया तो मां ने कहा—अरे बेटा ! तू भी यहीं बैठ जा । थोड़ा-सा हलुवा तू भी खा लेना । सुनकर खुशी-खुशी टिंकू बाप की बगल में जा बैठा ।

सूजी को कड़ाही में डालकर किसान की घरवाली इधर-उधर कुछ ढूंढ़ने लगी । अरे यहां तो घी भी नहीं है । घी किसने छिपा दिया ? मैंने तो घी भी यहीं रखा था ।

खटिया से पिंकू ने जबाब दिया—मां-मां मैं लाऊं घो ? घी.....घी मुझे मालूम है घी कहां रखा है ।

मां बोली—ले आ बेटा ।

जब पिंकू घी लेकर आया तो मां ने कहा—आ जा । तू भी बैठ जा यहीं । थोड़ा-सा हलुवा तू भी खा लेना । सुनकर पिंकू बड़ी खुशी-खुशी वहां बैठ गया ।

हलुवे में अभी पानी नहीं डाला था और बड़ी अचरज की बात थी कि वहां से पानी का लोटा भी गायब था ।

पानी का लोटा वहां से गायब देख मां ने जल्दी मचाते हुए कहा—हाय देखो तो यहां से पानी का लोटा भी किसी ने उठा लिया । अगर मैं कड़ाही जल्दी से नीचे नहीं उतारती तो यह सारी सूजी जल जाती । अब मैं पानी कहां से लाऊँ ?

इतने में मन्नू ने आवाज लगाई—मां-मां मुझे मालूम है पानी का लोटा कहां रखा है । तुम कहो तो मैं ला दूं पानी ।

मां ने कहा—हां बेटी, जल्दी से ले आ पानी । नहीं

तो यह सूजी नीचे कड़ाही में ही लग जाएगी। मन्नू पानी का लोटा ले आई।

जब मन्नू पानी लाई तो मां ने कहा—आ जा बेटी ! तू भी बैठ जा यहीं। थोड़ा हलुवा तू भी खा लीजो। यह सुनकर मन्नू भी बड़े चाव से वहां बैठ गई।

जब हलुवे में चीनी डालने की बारी आई तो किसान की घरवाली चारों ओर हाथ से टटोलती हुई बोली—यहां से तो चीनी भी गायब है। बिना चीनी के हलुवा कसे बन सकता है। मालूम होता है कि किसी ने चीनी भी छुपा दी है।

खटिया में से अन्नू ने आवाज लगाई—मां-मां मैं लाऊँ चीनी। मुझे मालूम है चीनी कहां रखी है।

मां ने कहा—ला बेटी चीनी ले आ। आ जा तू भी बैठ जा। जब जग ही गई है तो थोड़ा-सा हलुवा तू भी खा लीजो,

सुनकर अन्नू भी चूल्हे के पास आलथी-पालथी मार कर बैठ गई।

सबकी आवाजें सुन-सुनकर कन्नू भी उठ खड़ी हुई और वह भी बच्चों के साथ आकर बैठ गई।

मां ने जल्दी-जल्दी हलुवा बनाया। हलुवे की तेज खुशबू सारी झोंपड़ी में फैल गई। बच्चे बड़ी बेचैनी से इन्तजार करने लगे। कभी पांव पर पांव रखते तो कभी टांगें लम्बी पसार देते। कभी मुंह में आई हुई लार निगल लेते तो कभी बेकार ही कड़ाही में झांकने लगते।

जब हलुवा बनकर तैयार हुआ तो छः बच्चों के हिस्से सिर्फ एक-एक छोटा चम्मच ही आया। वे और-और करते तरसकर रह गये। लेकिन मां उन्हें और देती तो देती कहां से ? कड़ाही तो खाली हो गई थी।

बाप एक कोने में बैठा अपनी औरत की तरफ ताक रहा था। उसे अफसोस हो रहा था कि जिसके लिए यह सब कुछ किया गया उसके पल्ले तो कुछ पड़ा ही नहीं। बच्चे कड़ाही भी चाट गए।

बच्चों को हलुवा खाते देख मां तो फिर भी संतोष अनुभव कर रही थी परन्तु बाप एक हल्की-सी आह भर-कर रह गया। वह सोच रहा था कि अगर उसके एक या दो बच्चे होते तो आज वे इस तरह हलुवे के लिए तरसते नहीं।

इधर बच्चे हलुवे की जूठी कड़ाही देखकर टसुवे बहा रहे थे, उधर घर के बाहर खेतों में गांवों की बीर-बानियां ढपली की थाप पर नाच-गा रही थीं।

ज्यों-ज्यों रात बढ़ती जाती थी, त्यों-त्यों पैरों की गति

भी बढ़ती जाती थी और ढपली की थाप भी जोर पकड़ती जाती थी।

एक गीत खत्म होता तो दूसरा शुरू हो जाता—

धन्ना की बहू हंसती हुई गीत की कड़ियां मिलाने लगी—

हलुवा मोहे खिला दे बलमा, मेरी जीभ अब बस में नाय।

धन्ना ने गाया—

अरे! दो का खाना जब दस में बंटे, तो हलुवा कहां से आए?

अरे हलुवा तोहे खिला दूं तो मेरे ये बच्चे कहां से खाएं?

धनिया—

हलुवा मोहे खिला दे बलमा, मेरी जीभ है बस में नाय।

बलमा कपड़े सिला दे मोहे, ये जाड़ा अब तो सहा न जाय।

धन्ना—

अरे दो का कपड़ा जब दस में बंटे, तो पूरा कहां से होए ?
अरे अंगिया तोहे सिला दूं तो मेरे ये बच्चे कहां से पहरें ?

धनिया—

हलुवा मोहे खिला दे बलमा, मोसे इब तो रहा न जाए ।
अरे अब तो छप्पर डला दे बलमा, या टपका सहा न जाए।

धन्ना—

अरे, दो की आय जब दस में बंटे, तो छप्पर कहाँसे छाएं ?
अरे छप्पर नया छवा दूं तो मेरे ये बच्चे कहां से खाएं ।

धनिया—

अरे हलुवा मोहे खिला दे बलमा, अब तो रहा न जाए ।

धन्ना—

अरे हलुवा तोहे खिला दूं तो आटा कहां से आए ?
जब दो का खाना दस में बंटे तो हलुवा कहां से खाएं ।

धन्ना समझ गया था कि ज्यादा बच्चे होने से न तन ढंकता है, न पेट भरता है, न सेहत बनती है, न पढ़ाई-लिखाई होती है। उसने धनिया से कहा—धनिया इब की बार कम्प लगेगा तो तू भी अपरेशन करवा लीजो । घणे बालक ठीक नहीं होते ।

घणे बालक घणी तबाही,
थोड़े बालक थोड़ी तबाही ।

धनिया ने सिर हिला कर हामी भर दी । □□□

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
'शफीक मेमोरियल'
17-बी, इन्द्रप्रस्थ एस्टेट
नई दिल्ली-110002